Journal
Of the
Oriental Institute
M.S. University of Baroda

ISSN: 0030-5324
UGC CARE Group 1

राष्ट्र- भाषा : गांधीवादी दृष्टिकोण

Shubha Sinha
Associate Professor, Political Science
Shyama Prasad Mukherji College, University of Delhi.

किसी भी सभ्यता के अवशेष के अवलोकन से यह तथ्य सामने आता है कि उसके व्यापक उत्कर्ष में तत्कालीन विचारों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। विचारों को बल तभी मिल पाता है जब वह राष्ट्र भाषा पर आधारित हो। तात्पर्य यह कि भाषाई एकता किसी भी व्यापक उद्देश्य की प्राप्ति में सदैव अहम भूमिका निभाती रही हैं। समकालीन उपनिवेशवाद से मुक्त भारत के नवनिर्माण के माध्यम स्वरूप ' राष्ट्र भाषा' की स्वीकार्यता उतनी ही महत्वपूर्ण है।

वर्तमानकालीन हिंदी दिवस का आयोजन किया जाना एक औपचारिकता भी है और प्रतीक भी। औपचारिकता का स्वरूप तब सामने आ खड़ा हो जाता है, जब बड़े- बड़े विश्वविद्यालयों के हिंदी विभाग किसी आयोजित संगोष्ठी के पोस्टर अंग्रेजी में छपवाते हैं; देश के नामचीन संस्थान आजादी के दीवानों का जन्म शताब्दी समारोह ' बर्थ सैंटनरी सेलिब्रेशन' या ' फ्रीडम वीक' के रूप में मनाते हैं, न कि 'स्वतंत्रता सप्ताह'के रूप में ।

वस्तूत: किसी भी देश/ राजनीतिक व्यवस्था की भौगोलिक सीमाओं से जहां नागरिकों के शासकीय एकता में बंधे होने का अहसास होता है वहीं भाषाई एकता से परस्पर सौहार्द पूर्ण वैचारिक आदान-प्रदान होता है जो व्यक्तियों में भावनात्मक एकता का संचार करती है। अर्थात भाषाई एकता व्यक्तियों को सही मायने में राष्ट्रीय एकता एवं सांझी सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं आर्थिक आकांक्षाओं को पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।

ISSN: 0030-5324
UGC CARE Group 1

स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान भी यह तथ्य स्पष्ट रूप से सामने आई थी कि हिंदी या गंगा-जमूनी तहजीब पर आधारित हिंदुस्तानी ही हमारी सबसे सकारात्मक संपर्क भाषा रही हैं। संभवत: विचारों के आदान-प्रदान का यह एकमात्र ऐसा माध्यम उभर कर सामने आया है जो थोड़े देर से ही सही लेकिन बुद्धिजीवियों से लेकर सामान्य जन-मानस को सहज रुप से शुभ समझ आती रही है। इस भाषा की उपयोगिता से प्रभावित होकर ही गांधी ने स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान न केवल स्वयं अपने आपको अभिव्यक्त करने हेतु इसका पूरे देश में प्रयोग किया बल्कि इस बात पर भी जोर दिया कि यही वह माध्यम है जिससे देश की जनता को जागरूक/ संबोधित किया जाना चाहिए। गांधी यद्यपि बहु-भाषी भारत के प्रबल समर्थक थे परन्तु इसके साथ ही साथ उन्होंने इस बात को लेकर कभी संशय प्रकट नहीं किया कि एक राष्ट्र भाषा के रूप में हिंदुस्तानी को अपनाया जाना चाहिए क्योंकि यह हिन्दी और उर्दू के सहज मेल से बना है जिसमें न तो संस्कृत की भरमार है और न ही फारसी और अरबी की। मूलत: यह जनसंपर्क कि सर्वोपयोगी माध्यम है। उनके भाषा संबंधी विचारों का अगर हम गहनता से अध्ययन करें तो यह तथ्य सामने आता है कि वह सदैव एक ऐसी सामान्य/ देशज हिंदी भाषा के सार्थक उपयोग कि बात करते रहे हैं जो संपर्क शक्ति के रूप में स्थापित हो कर देश के जनमानस के परस्पर वैचारिक संवाद में हितकारी साबित हो। संभवत: इसी कारण से वह किसी भी प्रकार से सामान्य जन के लिए क्लिष्ट या संस्कृत आधारित तत्सम शब्दों अथवा क्लिष्ट साहित्यिक हिंदी की बात का समर्थन नहीं करते। दूसरे शब्दों में अगर कहा जाए तो संभवत: प्रेमचंद के 'गोदान' सदृश सहज साहित्यिक हिंदी के माध्यम से ही जनसंवाद स्थापित किया जा सकता है।

ISSN: 0030-5324
UGC CARE Group 1

गांधी जी का यह मानना था कि जनसाधारण कि राष्ट्र व्यापी संपर्क हेतु हमें उन सभी विकसित और अलिखित बोलियों का बलिदान करके उन्हें हिंदुस्तानी की विस्तृत धारा में समाहित कर देना चाहिए। ऐसा करना राष्ट्र निर्माण कि प्रक्रिया के संदर्भ में कुर्बानी के नजरिए से देखा जाना चाहिए न कि उन भाषाओं कि भ्रूण हत्या/ आत्महत्या के संदर्भ में। अपने वक्तव्यों एवं लेखों के माध्यम से उन्होंने अन्यान्य स्थानीय भाषाओं कि अस्मिता पर कुठाराघात किए बिना राष्ट्र भाषा के विकास पर हमेशा बल दिया। उनका यह मानना था कि जितना समय और परिश्रम उन मौखिक परंपराओं को लिखित रूप में स्थापित करने में किया जाता है उससे कहीं कम परिश्रम करके हिंदी को सीखा और अपनाया जा सकता है। और यह स्वीकारोक्ति कदापि उनके अस्तित्व को समाप्त नहीं करता अपितु उस संपूर्ण समुदाय को कहीं अधिक तीव्रता से मुख्यधारा में आने के लिए बल प्रदान करता है। किंतु दुःख की बात यह है कि आज भी कुछ मुट्ठी भर लोग अपनी सियासी रोटी सेंकने के निहित स्वार्थ के कारण इस विचार कि गंभीरता से न केवल परहेज करते हैं बल्कि परस्पर वैमनस्यता फैलाने के घृणित कृत्य में ठीक उसी प्रकार लिप्त रहते हैं जिस प्रकार_कभी वैसे ही डर को दिखाकर अंग्रेज मुसलमानों में संप्रदायिकता के बीज बोते थे ।यदि हर एक समुदाय अपनी जातीयता, क्षेत्रियता एवं सांप्रदायिकता के संकुचित बंधनों से हट कर परस्पर कुछ अच्छे कार्य करना आरंभ कर दे तो उसका निहितार्थ तो स्वयं सिद्ध है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि लोगों ने अपने निश्चित धारणाओं से निकलकर और बहुत कुछ नया सीखे हुए ही बेहतर कल को पाया है। ठहरे हुए पानी का कोई भविष्य नहीं होता, यह तथ्य जितना जल्दी कोई समुदाय/ समाज स्वीकार कर लेता है, वह उतना जल्दी जीवन के समग्र विकास में स्वयं को आगे खड़ा पाता है। अपने विचारों को किसी पर थोपे बगैर वह पूरी दृढ़ता से अपनी

ISSN: 0030-5324
UGC CARE Group 1

प्रतिबद्धता के प्रति समर्पित रहते हुए यह सुझाव देने में बिल्कुल नहीं झिझकते कि सुसंस्कृत राष्ट्र के रूप में अभ्युदय हेतु भारत को् एक सर्वमान्य सामान्य भाषा अपनाने कि तरफ कदम उठाना होगा तथा इस बात पर ध्यान रखना होगा कि हमें भाषा तथा लिपियों की संख्या अनावश्यक रूप से बढ़ाने वाली या देश की शक्तियों को क्षत- विक्षत करने वाली संक्रमणकारी किसी भी क्रिया का प्रतिकार करना होगा। यह तभी संभव है जब एक सामान्य भाषा पल्लवित-पुष्पित करने की दिशा में सकारात्मक कदम उठाए जाएंगे।आज जबकि तमाम संस्थाएं देशी भाषाओं की प्रमुख पुस्तकों का हिंदुस्तानी में अनुवाद करने में लगी हैं जिसका समर्थन गांधीजी बीसवीं सदी के प्रथम दशकों में ही कर रहे थे तब बरबस उनके भाषा संबंधी विचारों की प्रासंगिकता समझ में आनी ही चाहिए।

राष्ट्रभाषा के संबंध में गांधी के विचारों की व्यापकता का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि उन्होंने इसकी सार्थकता को कुछ सकारात्मक लक्षणों के कसौटी पर परखने कि सलाह दी है। उनके अनुसार राष्ट्र भाषा कि सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि वह सरकारी नौकरियों के निष्पादन में कितनी आसान है। यह भाषा ऐसी होनी चाहिए जिसे ज्यादा से ज्यादा भारतीय बोलते हों अर्थात वह भाषा संपूर्ण भारत के लिए सहज एवं ग्राह्य हो। और गांधीजी को अंग्रेजी में इनमें से एक भी लक्षण नजर नहीं आते हैं।

आज भी अंग्रेजी की तुलना में हिंदुस्तानी का प्रयोग कहीं आसान होता है। हां कभी-कभी यह बात अवश्य समझ के परे होता है कि साहित्य या शिक्षा से जुड़ा व्यक्ति जो सामान्यत: हिंदी बोलना जानता है , वह भी सार्वजनिक स्थानों पर अंग्रेजी बोलने लगता है। संभवत कुछ लोगों कि यह सोच बन चुकी है की सभ्यता और ज्ञान की भाषा अंग्रेजी

ISSN: 0030-5324
UGC CARE Group 1

के अतिरिक्त कोई नहीं है। इसलिए जैसी भी हो अंग्रेजी बोलना चाहिए। वास्तव में हमें तुलना नहीं करना है, अपितु अपने समाज की सुविधा एवं सभी को अभिव्यक्ति के प्रश्न पर गंभीरता से विचार करना है। यह सही है कि अंग्रेजी ने संभवतः भाषाई परिपक्वता का स्तर पा लिया है और हिंदी अभी तीव्रता से उस मार्ग पर अग्रसर है। अतः उसकी परिपक्वता के लिए हमें और अधिक प्रयास करना है। हमें इसके लिए विभिन्न भाषाओं से बहुत कुछ स्वीकार करना होगा। अंग्रेजी की प्रौढ़ावस्था उसके स्वीकार की प्रवृत्ति के कारण ही प्राप्त हो सकी है । हमें तो इसके लिए किसी विदेशी भूमि का रूख भी नहीं करना है, सिर्फ इतना करना है कि विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं को महत्व देते हुए उनके शब्दों को उचित तौर पर हिंदी में धीरे-धीरे स्थान देते रहा जाए। स्वीकार्यता कि इसी प्रवृत्ति से ही हिंदी को एक वास्तविक राष्ट्रभाषा के रूप में स्थापित किया जा सकता है। दूसरी क्षेत्रीय भाषाओं से यदि अछूत का व्यवहार किया जाएगा तो हिंदी संभवत कभी भी एक सर्वमान्य राष्ट्रभाषा का स्थान नहीं प्राप्त कर सकेगी, राजभाषा हो तो हो।

लोगों को यह भी निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिए कि गांधीजी को अंग्रेजी भाषा से कोई दुश्मनी थी। उनका तो स्पष्ट मानना था कि अंग्रेजी का इस्तेमाल वैदेशिक/ डिप्लोमैसी सरीखे मामलों में तो मान्य हो सकता है लेकिन इसे राष्ट्र भाषा का दर्जा नहीं दिया जा सकता। इसके लिए हिंदी/ हिंदुस्तानी से अधिक उपयुक्त वह किसी अन्य भाषा को नहीं मानते थे। गांधी जी ने स्वयं लिखा है कि द्रविड़ प्रदेशों और मद्रास प्रांत में उन्होंने अपना सारा काम हिंदी से चलाया है। भारत के लगभग प्रत्येक प्रांत में मुसलमान है और यह भी सही है कि वे उर्दू से अनभिज्ञ नहीं है। संभवत यही वह मूल बात थी जिसने गांधी जी को हिंदुस्तानी को संपर्क भाषा स्वीकार करने के लिए प्रेरित किया।

संदर्भिका

ISSN: 0030-5324
UGC CARE Group 1

1. महात्मा गांधी, मेरे सपनों का भारत, राजपाल एंड संस, दिल्ली, 2019.
2. इवोल्यूशन ऑफ़ द पोलिटिकल फिलौसोफी ऑफ गांधी, बुद्धदेव भट्टाचार्य, कलकत्ता बुक हाउस, कलकत्ता,1969.
3. शेखर बंदोपाध्याय, फ्रॉम प्लासी टू पार्टिशन, ओरिएंट लोंगमैन, नई दिल्ली, 2004.
4. जॉन फेनर ब्रायंट, गांधी एंड इंडियानाइजेसन ऑफ द एंपायर, कैम्ब्रिज, जे. हॉल एंड संस.
5. मनमोहन चौधरी, एक्सप्लोरिंग गांधी, गांधी पीस फाउंडेशन, नई दिल्ली,1989.